7

राज्य : उत्पत्ति और विकास

(STATE : ORIGIN AND DEVELOPMENT)

> ''राजनीतिक चेतना के उदय की परिस्थितियों के विषय में हम इतिहास द्वारा बहुत कम अथवा बिल्कुल नहीं जानते। जहाँ इतिहास असफल हो जाता है, वहाँ हम कल्पना का सहारा लेते हैं।''[1]
>
> —गिलक्राइस्ट

मनुष्य स्वभावत: जिज्ञासु है। अपनी जिज्ञासा के कारण वह सदैव भूतकाल के रहस्यों में उलझता रहा है। राज्य की उत्पत्ति कैसे हुई, वह कब अस्तित्व में आया, यह प्रश्न सदैव से ही राजनीतिक विचारकों के विचार का विषय रहा है। मनुष्य ने जिज्ञासा के कारण ही राज्य की उत्पत्ति के इतिहास का पता लगाने का प्रयत्न किया। इस सम्बन्ध में इतिहास द्वारा उचित ज्ञान प्राप्त न होने के कारण विचारकों ने कल्पना का आश्रय लिया है। कल्पना का आश्रय लेकर विचारकों द्वारा कई ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है जिनसे राज्य की उत्पत्ति की व्याख्या होती है। ''मनुष्य क्यों राजनीतिक संगठनों में रहते हैं'', ''वे क्यों प्रभुत्व के सम्मुख झुक जाते हैं'' अथवा ''प्रभुत्व की क्या सीमाएँ हैं'' आदि के सम्बन्ध में राजनीतिक विचारकों के दृष्टिकोण के आधार पर इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है।

राज्य की उत्पत्ति से सम्बन्धित मुख्य सिद्धान्त निम्नांकित हैं :

(1) दैवीय उत्पत्ति का सिद्धान्त,
(2) शक्ति सिद्धान्त,
(3) पैतृक सिद्धान्त,
(4) मातृक सिद्धान्त,
(5) सामाजिक समझौते का सिद्धान्त,
(6) ऐतिहासिक अथवा विकासवादी सिद्धान्त।

दैवीय उत्पत्ति का सिद्धान्त
(THE THEORY OF DIVINE ORIGIN)

राज्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में, अब तक जितने भी सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है, उनमें दैवीय उत्पत्ति का सिद्धान्त सबसे प्राचीन है। यह सिद्धान्त बताता है कि राज्य मानवीय नहीं वरन् ईश्वर द्वारा स्थापित एक दैवीय संस्था है। ईश्वर राजा के रूप में अपने किसी प्रतिनिधि को नियुक्त करता है। चूँकि राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है। अत: वह ईश्वर के प्रति ही उत्तरदायी है। राजा की आज्ञाओं का पालन करना प्रजा का परम पवित्र कर्तव्य है।

राज्य की उत्पत्ति के दैवीय सिद्धान्त का समर्थन, विविध धर्मग्रन्थों में भी किया गया है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन सर्वप्रथम् ईसाइयों का धर्म ग्रंथ **'ओल्ड टेस्टामेण्ट'** द्वारा किया गया था। यहूदी धर्म की प्रसिद्ध पुस्तक *'Old Testament'* में राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि माना गया है। इस सम्बन्ध में ईसाई सन्तों का कथन है कि **''राजा के प्रति विद्रोह की भावना ही ईश्वर के प्रति विद्रोह है और जो ऐसा करेगा, उसे मृत्यु मिलेगी।''** सेण्ट अगस्टाइन तथा पोप ग्रेगरी द्वारा भी इस सिद्धान्त का समर्थन किया गया है। **महाभारत**, **मनुस्मृति** आदि प्राचीन भारतीय ग्रंथों में भी इसका समर्थन करते हुए कहा गया है कि राजा का निर्माण इन्द्र, मित्र, वरुण, यम आदि देवताओं के अंश को लेकर हुआ है और राजा मनुष्य के रूप में एक महत्वपूर्ण देवता है। इसी प्रकार मिस्र और जापान में भी राजा को सूर्य पुत्र माना जाता है।

---

[1] "Of the circumstances surrounding the down of political consciousness, we know little or nothing from history. Where history fails, we must resort to speculation." —*Gilchirst*

स्टुअर्ट राजा जेम्स प्रथम ने अपनी पुस्तक *'Law of Monarchy'* में इस सिद्धान्त का समर्थन किया है। उसका प्रसिद्ध वाक्य है—**''राजा लोग पृथ्वी पर ईश्वर की जीवित प्रतिमायें हैं।''**[1] **रॉबर्ट फिल्मर** तथा **बूजे** ने भी इस सिद्धान्त का समर्थन किया है।

सिद्धान्त के प्रमुख तत्व (Main Elements of Theory)

1. राज्य ईश्वरीय संस्था है। 2. राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है। 3. ईश्वर ही राजाओं को शक्ति प्रदान करता है। 4. ईश्वर का प्रत्येक कार्य अनिवार्य रूप से सृष्टि के हित में होता है। ईश्वर का प्रतिनिधि होने के कारण राजा के भी सभी कार्य न्यायसंगत और जनहित में होते हैं। 5. राजसत्ता पैतृक होती है अर्थात् पिता के बाद पुत्र सत्ता का अधिकारी होता है। 6. राजाओं की आलोचना या निन्दा धर्म विरुद्ध है। इस सम्बन्ध में **जेम्स प्रथम** ने कहा था कि **''ईश्वर क्या करता है, इस पर विवाद करना नास्तिकता तथा पाखण्ड है। इसी प्रकार प्रजा के हृदय में राजा के कार्यों के प्रति आलोचना का भाव होना अथवा उसके द्वारा यह कहा जाना कि राजा यह कर सकता है और यह नहीं कर सकता, राजा का अपमान, अनादर और तिरस्कार करना है।''**

उपर्युक्त विशेषताओं के कारण दैवीय सिद्धान्त सदियों तक मान्य रहा।

आलोचना (Criticism)

आधुनिक युग विज्ञान का युग है। आज के वैज्ञानिक और प्रगतिशील संसार ने राज्य की उत्पत्ति के दैवीय सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया है। दैवीय सिद्धान्त की आलोचना निम्नलिखित रूपों में की जाती है :

1. **अनैतिहासिक व अवैज्ञानिक** (Unhistorical and Unscientific)—दैवीय सिद्धान्त पूर्ण रूप से अनैतिहासिक व अवैज्ञानिक सिद्धान्त है। इतिहास में इस तथ्य का कोई प्रमाण नहीं मिलता कि राज्य की स्थापना ईश्वर द्वारा की गई है। यह सिद्धान्त मनुष्य की जिज्ञासाओं का भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं देता है। अत: इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया जा सकता। **गिलक्राइस्ट** के अनुसार, **''यह धारणा कि परमात्मा इस या उस मनुष्य को राजा बनाता है, अनुभव एवं साधारण ज्ञान के सर्वथा प्रतिकूल है।''**[2]

2. **अतार्किक** (Illogical)—यह सिद्धान्त तर्क की कसौटी पर भी खरा नहीं उतरता। सभी धार्मिक ग्रंथों में ईश्वर को प्रेम और दया का भण्डार बताया गया है किन्तु व्यवहार में अब तक अनेक राजा अत्याचारी और दुष्ट प्रकृति के हुए हैं। इन दुष्ट राजाओं को प्रेम और दया के भण्डार ईश्वर का प्रतिनिधि कैसे कहा जा सकता है ? अत: तार्किक दृष्टि से भी यह सिद्धान्त अमान्य हो जाता है।

3. **राजा स्वेच्छाचारी हो जायेगा** (The King will be Autocrat)—यह सिद्धान्त राज्य को ईश्वरीय संस्था तथा राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि बताता है। यदि राजा को ईश्वर का जीवित रूप माना जाये तो उसके स्वेच्छाचारी व निरंकुश बनने का भय रहता है। इतिहास प्रमाणित करता है कि ऐसे राजाओं ने जनता को ईश्वरीय प्रकोप का भय दिखाकर उन पर अनेक अत्याचार किये। अत: इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

4. **रूढ़िवादी सिद्धान्त** (Conservative Theory)—यह सिद्धान्त राज्य को पवित्र संस्था मानता है, अत: इसके स्वरूप में परिवर्तन नहीं किया जा सकता किन्तु परिवर्तनों के अभाव में राज्य मानव जीवन के लिए अनुपयोगी हो जायेगा। अत: रूढ़िवादी प्रकृति के कारण इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

5. **अप्रजातान्त्रिक सिद्धान्त** (Undemocratic Theory)—राज्य की उत्पत्ति का दैवीय सिद्धान्त प्रजातन्त्र का विरोधी है। प्रजातन्त्रात्मक शासन में जनता स्वयं शासक को चुनती है तथा गलत कार्य करने पर उसे हटा सकती है लेकिन दैवीय सिद्धान्त प्रजातन्त्र की इन मान्यताओं को स्वीकार नहीं करता। इसमें राजा के द्वारा गलत कार्य किये जाने पर भी जनता को उसका विरोध करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। अत: यह सिद्धान्त अव्यावहारिक हो जाता है।

6. **आधुनिक समय में लागू नहीं** (Not Applicable in Modern Time)—आधुनिक युग में राजा ईश्वर द्वारा नियुक्त न होकर जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं। अत: वर्तमान में दैवीय सिद्धान्त को लागू नहीं किया जा सकता।

---

[1] "Kings are breathing images of God upon earth."

[2] "To say that God selects this or that man as a ruler is contrary to experience and common sence."
—*Gilchrist*

महत्व (Importance)—आधुनिक युग में दैवीय सिद्धान्त को मान्यता प्राप्त नहीं है लेकिन प्रारम्भ में यह सिद्धान्त अत्यन्त उपयोगी रहा है। इस सिद्धान्त ने राज्य को दैवीय संस्था तथा राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि बताकर प्रारम्भिक व्यक्ति को राजभक्ति तथा आज्ञापालन का पाठ पढ़ाया। इस सिद्धान्त द्वारा व्यक्ति के व्यवस्थित जीवन का प्रारम्भ हुआ। **गिलक्राइस्ट** के शब्दों में, **''यह सिद्धान्त चाहे कितना भी गलत और विवेकशून्य क्यों न हो, अराजकता के अन्त का श्रेय इसे अवश्य ही जाता है।''** यह सिद्धान्त इस तथ्य का भी प्रतिपादन करता है कि राजा का ईश्वर के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व होता है इसलिए राजा को शासन शक्ति का उचित रूप में प्रयोग करना चाहिए। इस दृष्टि से दैवीय सिद्धान्त एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है।

शक्ति सिद्धान्त
(FORCE THEORY)

शक्ति सिद्धान्त के अनुसार, राज्य की उत्पत्ति का कारण शक्ति है। इस सिद्धान्त के अनुसार, राज्य और शासन शक्ति पर आश्रित हैं। शक्ति से तात्पर्य बल प्रयोग से है। जब शक्ति सम्पन्न लोगों ने अपनी शक्ति द्वारा निर्बलों को अपने अधीन कर लिया, तब राज्य की उत्पत्ति हुई। शक्ति सिद्धान्त के अनुसार, मानव विकास के प्रारम्भ में कुछ शक्तिशाली मनुष्यों ने निर्बल मनुष्यों को अपने अधीन कर लिया। शक्तिशाली समूह का नेता पराजित समूह का भी नेता हो गया। धीरे-धीरे वही नेता इन समूहों का शासक हो गया। इसी क्रम से जनपद राज्य और साम्राज्य उत्पन्न हुए। राज्य की उत्पत्ति के विषय में इस प्रकार के विचार अनेक विचारकों द्वारा व्यक्त किये गये हैं और राज्य की उत्पत्ति और उसके अस्तित्व का आधार शक्ति को माना है। **ह्यूम** ने भी अपनी पुस्तक '*Original Contract*' में लिखा है कि **"राज्य की उत्पत्ति उस समय हुई होगी, जब किसी मानव दल के नेता ने शक्तिशाली होकर अपने अनुयायियों पर अधिकार जमाकर उन पर अपना शासन लादा होगा।''**

राज्य की उत्पत्ति का शक्ति सिद्धान्त बहुत प्राचीन है। प्राचीन यूनान के सोफिस्टों की भी यही मान्यता थी। इसी कारण **प्लेटो** की पुस्तक **रिपब्लिक** में **थ्रेसीमेकस** ने कहा है कि **''न्याय शक्तिशाली व्यक्ति के हित के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। शक्तिशाली व्यक्ति की आज्ञा ही न्याय है।''**

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में भी शक्ति के आधार पर राज्य की स्थापना की बात कही गई है। **जैसे— 'ऐतरीय ब्राह्मण' एवं 'तैत्तरीय ब्राह्मण' में बताया गया है कि देवों और दानवों के युद्ध में जब देवता पराजित हो गये तो उन्होंने शक्तिशाली इन्द्र को अपना राजा बनाया और उनके नेतृत्व में विजय प्राप्त की।**

मध्ययुग में धर्मसत्ता के प्रतिपादक धर्मगुरुओं ने भी राज्य को पाशविक शक्ति का परिणाम बताया है। स्वयं **पोप ग्रेगरी सप्तम्** ने सन् 1880 में लिखा है कि **''राजाओं और सामन्तों की उत्पत्ति उन क्रूर आत्माओं से हुई है जो परमात्मा को भूलकर उद्दण्डता, लूटमार, कपट, हत्या और प्रत्येक अपराध से संसार के शासक के रूप में बुराई का प्रसार करते हुए अपने साथी मनुष्यों पर मदांधता और असहनीय धारणा के साथ राज्य करते रहे हैं।''**

आधुनिक युग में **ट्रीटस्के, बर्नहार्डी, मारगेन्थो** तथा **नीत्शे** आदि विचारकों ने भी शक्ति सिद्धान्त का समर्थन किया है। इस सम्बन्ध में **ट्रीटस्के** का कथन है कि **''राज्य आक्रमण और प्रतिरक्षा की सार्वजनिक शक्ति है जिसका काम युद्ध करना है।''**

मार्क्स ने राज्य को वर्ग संघर्ष का परिणाम माना है। अराजकतावादी विचारकों ने राज्य को पाश्विक बल का प्रतीक माना है। व्यक्तिवादी विचारकों ने शक्ति पर आधारित होने के कारण ही राज्य को एक **'आवश्यक बुराई'** माना है। साम्यवादी विचारक भी राज्य को एक शक्तिमूलक संस्था मानते हैं। इस सम्बन्ध में **लेनिन** का कथन है कि **''राज्य पूँजीपतियों के हाथ में शोषण का एक ऐसा साधन है जिससे वे बहुसंख्यक** जनता पर **शासन करते हैं।''**

हिटलर और **मुसोलिनी** ने शक्ति के आधार पर अपने क्षेत्र का निरन्तर विस्तार किया तथा इसे प्राकृतिक बताया।

शक्ति सिद्धान्त की मुख्य विशेषताएँ (Chief Characteristics of Force Theory)

शक्ति सिद्धान्त की मुख्य विशेषताएँ निम्नांकित हैं :

1. राज्य की उत्पत्ति शक्ति से हुई है। जब समाज के शक्तिशाली व्यक्तियों ने निर्बलों को अपने आधीन कर लिया तब राज्य अस्तित्व में आया। **लीकॉक** के शब्दों में, **''राज्य का जन्म मनुष्य द्वारा मनुष्य को दास बनाने तथा निर्बल कबीले पर बलशाली कबीले की विजय द्वारा हुआ।''**

2. राज्य का आधार शक्ति है। आज भी राज्य में शक्ति के लिए संघर्ष चलता रहता है। **ब्लंशली** के कथनानुसार, **''बिना शक्ति के न तो कोई राज्य उत्पन्न होता है और न वह स्थायी रह सकता है।''**

3. यह सिद्धान्त **''जिसकी लाठी उसकी भैंस''** के सिद्धान्त पर आधारित है। यह राज्य के अधिकारों को न्यायोचित ठहराता है।

शक्ति सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Force Theory)

यद्यपि शक्ति राज्य की उत्पत्ति का एक महत्वपूर्ण कारक है तथा राज्य के अस्तित्व के लिए शक्ति अनिवार्य है, तथापि हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि केवल शक्ति के प्रयोग से ही राज्य की उत्पत्ति सम्भव नहीं हुई है। इसीलिए शक्ति सिद्धान्त की कटु आलोचना हुई है आलोचना के बिन्दु निम्नांकित हैं :

1. **राज्य की उत्पत्ति केवल शक्ति से ही सम्भव नहीं** (The Origin of State is not Possible by Force)—शक्ति सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहा जाता है कि राज्य की उत्पत्ति केवल शक्ति से ही नहीं हुई है और न ही शक्ति राज्य का एकमात्र तत्व है। राज्य की उत्पत्ति में रक्त सम्बन्ध, धार्मिक एकता, आर्थिक हित तथा राजनीतिक चेतना ने भी महत्वपूर्ण योग दान दिया है। **सीले** के शब्दों में कहा जा सकता है कि **''राज्य की उत्पत्ति केवल शक्ति से ही नहीं हुई, यद्यपि विस्तार के क्रम में निःसंदेह शक्ति ने भाग लिया है।''**[1]

2. **शक्ति राज्य का स्थायी आधार नहीं** (Force is not Permanent Basis of State)—इस सिद्धान्त के आलोचकों का विचार है कि केवल शक्ति ही राज्य का आधार नहीं होती और न ही शक्ति राज्य को आवश्यक दृढ़ता एवं स्थायित्व प्रदान कर सकती है। इस सम्बन्ध में **बोदां का कथन है कि, ''शक्ति केवल डाकुओं के गिरोह का ही संगठन कर सकती है, राज्य का नहीं।''**[2] वस्तुतः इच्छा जो औचित्य और अनौचित्य पर निर्भर होती है, राज्य का आधार होती है। इसका अतिक्रमण करना किसी भी समाज के लिए घातक होता है। यही सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने का एकमात्र साधन है। इसके अतिरिक्त शक्ति स्थायी नहीं है, जबकि राज्य स्थायी है। अस्थिर वस्तु स्थिर वस्तु का आधार हो ही नहीं सकती है। **ग्रीन** के शब्दों में, **''राज्य का आधार शक्ति नहीं वरन् इच्छा है।''**[3]

3. **व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की समाप्ति** (End of Personal Liberty)—आलोचकों के अनुसार, यदि शक्ति को राज्य का आधार मान भी लिया जाय तो **''जिसकी लाठी उसकी भैंस''** की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। परिणामस्वरूप व्यक्ति स्वतन्त्रता का उपभोग नहीं कर पायेंगे। राज्य सबल तथा निर्बल दोनों के हितों की रक्षा के लिए होता है। औचित्य रहित निरंकुश शक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता की विरोधी होती है।

4. **प्रजातान्त्रिक धारणा के विरुद्ध** (Against the theory of Democracy)—प्रजातन्त्र जनइच्छा, स्वतन्त्रता, समानता तथा न्याय में विश्वास करता है जबकि शक्ति सिद्धान्त के अनुसार शक्ति ही राज्य का आधार है। अतः यह सिद्धान्त प्रजातान्त्रिक धारणाओं के विपरीत है।

5. **अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के लिए हानिकारक** (Harmful for International Sympathy)—यदि हम शक्ति को राज्य आधार स्वीकार भी कर लें तो सदैव ही युद्ध की अवस्था बनी रहेगी परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति कभी भी स्थापित नहीं हो सकेगी। अतः अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सद्भाव के हित में शक्ति को मान्यता नहीं दी जा सकती।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि राज्य की उत्पत्ति का कारण शक्ति नहीं वरन् मानव चेतना है। इस सम्बन्ध में **गिलक्राइस्ट** का कथन है कि **''राज्य सरकार और वास्तव में सभी संस्थाएँ मानव चेतना का परिणाम होती हैं और वे ऐसी कृतियाँ होती हैं जो मानव के नैतिक उद्देश्य को समझने के फलस्वरूप उत्पन्न हुई हैं।''**[4]

---

[1] "The emergence of the state was not due to force, although in the process of expansion force has undoubtedly played a part." —Seeley : *Introduction of Political Science*, p. 73-75.

[2] "Superior force make a band of robbers, but not of a State." —*Bodin*

[3] "Will not force is the basis of State." —*T. H. Green*

[4] "The State Government and indeed all institutions are the result of man's consciousness, creation which have arisen from his appreciation of a moral end." —*Gilchrist*

शक्ति सिद्धान्त का महत्व (Importance of Force Theory)

शक्ति सिद्धान्त की उपर्युक्त आलोचनाओं से यह नहीं समझा जाना चाहिए कि शक्ति सिद्धान्त बिल्कुल ही महत्वहीन है। राज्य की उत्पत्ति में शक्ति एक तत्व रहा है और आज भी शक्ति राज्य के अस्तित्व का एक प्रमुख आधार है। राज्य के विकास एवं संचालन दोनों में शक्ति की आवश्यकता होती है। अत: यह आवश्यक है कि शक्ति का प्रयोग औचित्यपूर्ण तरीके से जनसाधारण के हित में ही किया जाना चाहिए।

सामाजिक समझौते का सिद्धान्त
(THE THEORY OF SOCIAL CONTRACT)

सामाजिक समझौते का सिद्धान्त राज्य की उत्पत्ति का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार, राज्य ईश्वरीय संस्था न होकर एक मानवीय संस्था है। इस (समझौता) सिद्धान्त के अनुसार, राज्य का निर्माण व्यक्तियों ने पारस्परिक समझौते द्वारा किया है। समझौते से पूर्व व्यक्ति प्राकृतिक अवस्था में रहते थे। किन्हीं कारणों से व्यक्तियों ने प्राकृतिक अवस्था त्यागकर समझौते द्वारा राजनीतिक समाज की रचना की। इस समझौते से व्यक्तियों को सामाजिक अधिकार प्राप्त हुए। **लीकॉक** के अनुसार, ''**राज्य व्यक्तियों के स्वार्थों द्वारा चालित एक ऐसे आदान-प्रदान का परिणाम था जिससे व्यक्तियों ने उत्तरदायित्वों के बदले विशेषाधिकार प्राप्त किये।**''[1]

सिद्धान्त का विकास (Development of Theory)

महाभारत के 'शान्तिपर्व' तथा **कौटिल्य** की पुस्तक **'अर्थशास्त्र'** में इस स्थिति का वर्णन मिलता है कि अराजकता की स्थिति से त्रस्त होकर मनुष्यों ने परस्पर समझौते द्वारा राज्य की स्थापना की।

यूनान में **सोफिस्ट वर्ग** ने सर्वप्रथम इस विचार का प्रतिपादन किया। **इपीक्यूरिन विचारधारा वाले वर्ग** तथा **रोमन विचारकों** द्वारा भी इसका समर्थन किया गया। मध्ययुग में **मेनगोल्ड** तथा **थॉमस एक्वीनास** द्वारा भी इसका समर्थन किया गया। सर्वप्रथम **रिचार्ड हूकर** ने वैज्ञानिक रूप में समझौते की तर्कपूर्ण व्याख्या प्रस्तुत की। डच न्यायाधीश **ग्रोशियस, पूफेण्डोर्फ** तथा **स्पिनोजा** ने इसका समर्थन किया किन्तु इस सिद्धान्त का वैज्ञानिक और विधिवत् प्रतिपादन 'संविदावादी विचारक' **हॉब्स, लॉक तथा रूसो** द्वारा किया गया है।

थॉमस हॉब्स इंग्लैण्ड के निवासी थे। उनके समय में राजतन्त्र और प्रजातन्त्र के समर्थकों के बीच गृहयुद्ध चल रहा था। हॉब्स का विश्वास था कि देश में शान्ति तथा व्यवस्था की स्थापना के लिए शक्तिशाली राजतंत्र का होना अति आवश्यक है। हॉब्स ने सन् 1651 में प्रकाशित अपनी पुस्तक **'लेवयाथन'** (Leviathan) में समझौता सिद्धान्त का प्रतिपादन कर निरंकुश राजतन्त्र का समर्थन किया।

हॉब्स ने सामाजिक समझौते की व्याख्या निम्न प्रकार से की है :

मानव स्वभाव (Human Nature)—हॉब्स के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी नहीं है। वह एक स्वार्थी, अहंकारी तथा आत्माभिमानी प्राणी है। वह सदैव शक्ति से ही प्रेम करता है और शक्ति प्राप्त करने का निरन्तर प्रयास करता रहता है।

प्राकृतिक दशा (State of Nature)—प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य के जीवन पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं था जिससे प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य को शत्रुता की दृष्टि से देखने लगा। मनुष्यों को न्याय-अन्याय, उचित-अनुचित, अच्छे-बुरे अथवा सत्य-असत्य का कोई ज्ञान नहीं था। प्राकृतिक अवस्था **'शक्ति ही सत्य है'** की धारणा पर आधारित थी। **हॉब्स** के शब्दों में, ''**वहाँ कोई व्यवसाय न था, कोई संस्कृति न थी, कोई विद्या नहीं थी, कोई भवन निर्माण कला न थी और न कोई समाज था। मानव जीवन असत्य, दीन, मलिन, पाश्विक तथा अल्पकालिक था।**''[2]

समझौते के कारण (Causes of Contract)—प्राकृतिक अवस्था में मनुष्यों का जीवन तथा उनकी सम्पत्ति सुरक्षित नहीं थी। मनुष्यों ने अपने जीवन तथा सम्पत्ति की सुरक्षा करके अपने दु:खी जीवन से छुटकारा पाने के लिए परस्पर एक समझौता किया और एक राजनीतिक समाज का निर्माण किया।

समझौता (Contract)—**हॉब्स** के अनुसार, प्राकृतिक अवस्था का अन्त करने के लिए सभी व्यक्तियों ने मिलकर समझौता किया। **हॉब्स** के शब्दों में, ''**मैं इस व्यक्ति अथवा सभा को अपने अधिकार और**

---

[1] "The State is the result of a bargain dictated by the individual's own interest on exchange of obligations ir return for privileges."
—*Leacock*

[2] "Human life was solitary, poor, nasty, brutish and short."
—*Hobbes*

शक्ति का समर्पण करता हूँ जिससे कि वह हम पर शासन करे, परन्तु इसी शर्त पर कि आप भी अपने अधिकार और शक्ति का समर्पण इसे इसी रूप में करें और इसकी आज्ञाओं को मानें।'' इस समझौते के अन्तर्गत शासक कोई पक्ष नहीं है।

नवीन राज्य का रूप (Nature of New State)—**हॉब्स** के समझौते द्वारा निरंकुश राजतन्त्रात्मक राज्य की स्थापना की गई है। शासक के प्रजा के प्रति कोई कर्तव्य नहीं हैं तथा प्रजा को शासक वर्ग के विरुद्ध विद्रोह करने का अधिकार प्राप्त नहीं है।

जॉन लॉक (John Locke)

जॉन लॉक इंग्लैण्ड का निवासी था। उसके समय में इंग्लैण्ड में गौरवपूर्ण क्रान्ति हो चुकी थी और राजा के विरुद्ध संसद की अन्तिम प्रभुता को स्वीकार कर लिया गया था। **जॉन लॉक** ने सन् 1690 में अपनी पुस्तक *'Two Treaties on Government'* में समझौता सिद्धान्त का प्रतिपादन कर सीमित या वैधानिक राजतन्त्र का प्रतिपादन किया।

मानव स्वभाव (Human Nature)—**लॉक** के अनुसार, मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसमें प्रेम, सहानुभूति, दया तथा सहयोग की भावनाएँ विद्यमान हैं।

प्राकृतिक अवस्था (State of Nature)—प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य सुख और शान्ति का जीवन व्यतीत करता था। वह उस समय के नियम **''तुम दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा व्यवहार तुम दूसरों से अपने प्रति चाहते हो''** का पालन करते थे। सभी मनुष्यों को अपने जीवन, स्वतन्त्रता तथा सम्पत्ति के अधिकार प्राप्त थे।

समझौते के कारण (Causes of Contract)—**लॉक** के अनुसार, इस आदर्श प्राकृतिक अवस्था में कुछ कमियाँ थीं—(1) प्राकृतिक नियमों की स्पष्ट व्यवस्था नहीं थी; (2) इन नियमों की व्याख्या करने के लिए कोई सभा नहीं थी; (3) इन नियमों का पालन करवाने वाली शक्ति का अभाव था। इन कमियों को दूर करने के लिए व्यक्तियों द्वारा समझौता किया गया।

समझौता (Contract)—**लॉक** के अनुसार, राज्य का निर्माण करने के लिए **दो समझौते** किये गये। पहले समझौते द्वारा प्राकृतिक अवस्था का अन्त करके **समाज** की स्थापना की गई। इसके बाद दूसरा समझौता हुआ जिसमें शासित वर्ग ने शासक वर्ग को कानून बनाने, उनकी व्याख्या करने तथा उन्हें लागू करने का अधिकार दे दिया किन्तु यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया कि शासक प्राकृतिक नियमों के अनुकूल तथा जनहित में ही कानूनों का निर्माण करेगा। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो समाज उसके स्थान पर दूसरी सरकार की स्थापना कर सकता है।

नवीन राज्य का स्वरूप (Nature of New State)—इस प्रकार **लॉक** द्वारा सीमित या वैधानिक राजतंत्र की स्थापना की गई। इसमें वास्तविक तथा अन्तिम शक्ति जनता में निहित होती है।

जीन जेक्स रूसो (Jean Jaques Rousseau)

रूसो ने अपनी पुस्तक *'The Social Contract'* में सामाजिक समझौता सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।

मानव स्वभाव (Human Nature)—**रूसो** के अनुसार, मनुष्य स्वभावतः अच्छा होता है। उसमें दया तथा परोपकार की भावना होती है। **रूसो** के शब्दों में, **''मनुष्य मौलिक रूप से अच्छा है और सामाजिक बुराइयाँ ही मानवीय अच्छाई में बाधक बनती हैं।''**

प्राकृतिक अवस्था (State of Nature)—रूसो ने प्राकृतिक अवस्था के व्यक्ति के लिए **'आदर्श बर्बर'** शब्द का प्रयोग किया है। इस 'आदर्श बर्बर' को अच्छाई-बुराई, तेरे-मेरे का कोई ज्ञान नहीं था। उसे किसी साथी की भी आवश्यकता नहीं थी। वह अपने आप में ही पूर्ण सन्तुष्ट था। उसमें वृद्धि तथा विवेक का अभाव था। प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य का जीवन सरल, शान्त, सुखमय तथा सन्तुष्ट था।

समझौते के कारण (Causes of Contract)—रूसो के मतानुसार, कृषि का आविष्कार होने पर व्यक्तियों ने भूमि पर अधिकार करना प्रारम्भ कर दिया जिससे सम्पत्ति तथा तेरे-मेरे की भावना उत्पन्न हुई। रूसो लिखता है कि **''यह पहला व्यक्ति समाज का वास्तविक जन्मदाता था जिसने एक भू-भाग को बाड़े से घेरकर कहा कि यह मेरी भूमि है और जिसे अपने कथन के प्रति विश्वास करने वाले सरल व्यक्ति**

मिल गये।''[1] व्यक्तिगत सम्पत्ति के कारण प्राकृतिक अवस्था का आदर्श रूप नष्ट हो गया तथा युद्ध, संघर्ष और विनाश का वातावरण उत्पन्न हो गया। समाज की वही दशा हो गई जो हॉब्स की प्राकृतिक अवस्था में थी।

समझौता (Contract)—इस युद्ध और संघर्ष के वातावरण का अन्त करने के लिए सभी व्यक्तियों ने एक स्थान पर एकत्रित होकर समझौता किया। इस समझौते में सभी व्यक्तियों ने अपने समस्त अधिकारों का समर्पण, किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं वरन् सम्पूर्ण समाज के लिए किया। फलस्वरूप सम्पूर्ण समाज की **सामान्य इच्छा** उत्पन्न हुई। सभी व्यक्ति इस सामान्य इच्छा के अधीन हैं। **रूसो** के शब्दों में, समझौते के अन्तर्गत, **''प्रत्येक अपने व्यक्तित्व और अपनी पूर्ण शक्ति को सामान्य प्रयोग के लिए सामान्य इच्छा के सर्वोच्च निर्देशन के अधीन समर्पित कर देता है तथा एक समूह के रूप में अपने व्यक्तित्व तथा अपनी पूर्ण शक्ति को प्राप्त कर लेता है।''**

नवीन राज्य का रूप (Nature of New State)—रूसो के समझौते द्वारा लोक तन्त्रात्मक राज्य की स्थापना होती है जिसमें सम्प्रभुता सम्पूर्ण समाज में निहित होती है तथा जनता की सामान्य इच्छा के विरुद्ध कार्य करने वाली सरकार को हटाने का अधिकार होता है।

सामाजिक समझौता सिद्धान्त की आलोचना
(CRITICISM OF SOCIAL CONTRACT THEORY)

सामाजिक समझौता सिद्धान्त की राजनीतिक विचारकों द्वारा कटु आलोचना की गई है। **ब्लंटशली** ने इस सिद्धान्त को **'अत्यधिक भयंकर'**, **वूल्जे** ने **'सरासर झूठा'** तथा **ग्रीन** ने इसे, **'कपोल-कल्पना**, कहकर सम्बोधित किया है। **सर हेनरीमेन** ने तो यहाँ तक कहा है कि **''समाज तथा सरकार की उत्पत्ति के इस वर्णन से बढ़कर व्यर्थ की वस्तु और क्या हो सकती है।'' बेन्थम सर फ्रेडरिक पोलक, वाहन, एडमण्ड बर्क** आदि विचारकों ने भी इस सिद्धान्त की कटु आलोचना की है। इस सिद्धान्त की आलोचना ऐतिहासिक, दार्शनिक, तार्किक तथा वैज्ञानिक आधारों पर निम्नानुसार की गई है :

ऐतिहासिक आधार पर आलोचना (Criticism on Historical Point of View)

ऐतिहासिक आधार पर आलोचना निम्न रूपों में की गई है :

(1) **समझौता अनैतिहासिक** (Unhistorical Contract)—ऐतिहासिक दृष्टि से यह समझौता सिद्धान्त असत्य है क्योंकि इतिहास में कहीं भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता कि आदिम मनुष्यों ने पारस्परिक समझौते के आधार पर राज्य की स्थापना की हो। इस सम्बन्ध में **डॉ. गार्नर** का कथन सत्य ही है कि **''इतिहास में कोई ऐसा प्रामाणिक उदाहरण नहीं मिलता जिसके अनुसार ऐसे व्यक्तियों द्वारा, जिन्हें पहले से राज्य का पता नहीं था, अपने समझौते से राज्य की स्थापना की गई है।''**

(2) **प्राकृतिक अवस्था की धारणा गलत** (Wrong Concept of State of Nature)— सामाजिक समझौता सिद्धान्त मानव इतिहास को दो भागों में विभाजित करता है : (i) प्राकृतिक अवस्था, तथा (ii) सामाजिक अवस्था। ऐतिहासिक दृष्टि से यह विभाजन असत्य है, क्योंकि इतिहास में हमें ऐसी अवस्था का प्रमाण नहीं मिलता। जब मनुष्य संगठन-विहीन अवस्था में रहा हो।

(3) **राज्य विकास का परिणाम है, निर्माण का नहीं** (State is the Result of Development not 'Building')—इतिहास से पता चलता है कि राज्य तथा अन्य मानव संस्थाओं का धीरे-धीरे विकास हुआ है। सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य प्रारम्भ में परिवारों में, फिर कुलों, फिर कबीलों और जनपदों तथा राज्यों में संगठित हुआ। **ला फर** के शब्दों में, **''परिवार की भाँति ही राज्य समाज के लिए आवश्यक है और वह समझौते का नहीं वरन् वस्तुस्थिति के प्रभाव का परिणाम है।''** अतः सामाजिक समझौता सिद्धान्त के इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि राज्य का किसी एक विशेष समय पर निर्माण हुआ है।

दार्शनिक आधार (Philosophical Point of View)

दार्शनिक आधार पर इस सिद्धान्त की आलोचना निम्न प्रकार की जाती है :

(1) **राज्य की सदस्यता अनिवार्य है, ऐच्छिक नहीं** (The Membership of State is Necessary not Optional)—राज्य की सदस्यता ऐच्छिक नहीं वरन् अनिवार्य होती है। व्यक्ति उसी प्रकार राज्य के सदस्य

---

[1] "The first man, who after enclosing a piece of ground without himself to say, this is mine and found people simple enough to believe him, was the real founder of civil society." —*Rousseau*

होते हैं जिस प्रकार परिवार के। **बर्क** के शब्दों में, **''राज्य को काली मिर्च, कहवा, वस्त्र या तम्बाकू अथवा ऐसे ही अन्य सामान्य व्यापार की साझेदारी समझौते के समान नहीं समझा जाना चाहिए जिसे अस्थायी स्वार्थ के लिए कर लिया गया हो और समझौते के पक्ष इच्छानुसार भंग कर सकते हों। इसे सम्मान की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। यह तो समस्त विज्ञान, समस्त कला, समस्त गुणों और समस्त पूर्णता के बीच साझेदारी है।''** सामाजिक समझौता सिद्धान्त राज्य को ऐच्छिक समुदाय बताता है जो पूर्णरूपेण गलत है।

(2) **राज्य और व्यक्ति के सम्बन्धों की अनुचित व्याख्या** (Wrong Explanation of Relationship of State and Person)—सामाजिक समझौता सिद्धान्त राज्य और व्यक्ति के सम्बन्धों की गलत व्याख्या प्रस्तुत करता है। व्यक्ति और राज्य के पारस्परिक सम्बन्ध मानवीय स्वभाव पर आधारित होते हैं किसी समझौते पर नहीं। **वॉन हॉलर** के शब्दों में, **''यह कहना कि व्यक्ति और राज्य में समझौता हुआ उतना ही युक्तिसंगत है जितना यह कहना कि व्यक्ति और सूर्य में इस प्रकार का समझौता हुआ कि सूर्य व्यक्ति को गर्मी दिया करे।''**

(3) **राज्य प्राकृतिक संस्था है** (State is a Natural Institution)—सामाजिक समझौता सिद्धान्त के अनुसार, राज्य का निर्माण व्यक्तियों द्वारा किया गया है। अतः यह एक कृत्रिम संस्था है जबकि आलोचकों के अनुसार राज्य मानव के स्वभाव पर आधारित एक प्राकृतिक संस्था है। **मालबर्न** का कथन है कि **''राज्य व्यक्तियों के बीच स्वेच्छा से किये गए समझौते से नहीं बना है। मनुष्यों को उन सामाजिक आवश्यकताओं से बाध्य होकर राज्य में रहना पड़ा, जिनसे वह बच नहीं सकता था।''**

(4) **विद्रोह का पोषक** (Saviour of Rebellian)—सामाजिक समझौता सिद्धान्त राज्य को व्यक्तिगत सनक का परिणाम बताकर विद्रोह, क्रान्ति तथा अराजकता का मार्ग प्रशस्त करता है। **लाइबर** के अनुसार, **''इस सिद्धान्त को अपनाने से अराजकता फैलने का डर है।''** **ब्लंटशली** के अनुसार, **''सामाजिक समझौता सिद्धान्त अत्यन्त भयानक है, क्योंकि यह राज्य और अन्य संस्थाओं को व्यक्तिगत सनक का परिणाम बताता है।''**[1]

(5) **प्राकृतिक अवस्था में अधिकारों का अस्तित्व सम्भव नहीं** (Place of Rights not Possible in State of Nature)—**लॉक** का विचार है कि प्राकृतिक अवस्था में भी व्यक्ति प्राकृतिक अधिकारों का उपयोग करते थे किन्तु यह धारणा नितान्त भ्रामक है, क्योंकि अधिकारों का जन्म समाज में होता है तथा राज्य में रहकर ही अधिकारों का प्रयोग किया जा सकता है। **ग्रीन** के शब्दों में, **''प्राकृतिक अवस्था में, जो कि एक असामाजिक स्थिति होती है, अधिकारों की कल्पना स्वयं ही एक विरोधाभास है।''**

तार्किक आधार पर (Logical Base)

अतार्किक (Illogical)—सामाजिक समझौता सिद्धान्त तार्किक दृष्टि से भी असंगत है। प्राकृतिक अवस्था में रहने वाले व्यक्तियों में जो कि राज्य संस्था से बिल्कुल अपरिचित थे, एकाएक ही राजनीतिक चेतना कैसे उत्पन्न हुई ? यह बात समझ में नहीं आती है, क्योंकि राजनीतिक चेतना सामाजिक जीवन में ही उत्पन्न होती है, प्राकृतिक अवस्था में नहीं। कहावत है कि, **''एक रात में चीता अपना रंग नहीं बदल सकता।''**[2]

वैधानिक आधार (Legal Point of View)

वैधानिक आधार पर इस सिद्धान्त पर निम्न आक्षेप लगाये जाते हैं :

(1) **प्राकृतिक अवस्था में समझौता असम्भव** (Contract Impossible in State of Nature)—आलोचकों के अनुसार, प्राकृतिक अवस्था में किये गये समझौते का वैधानिक दृष्टि से कोई महत्व नहीं है क्योंकि कोई समझौता तभी वैध होता है जब उसे राज्य की स्वीकृति प्राप्त हो जाती है लेकिन प्राकृतिक अवस्था में राज्य का अभाव होने के कारण समझौता वैध नहीं है। **ग्रीन** के शब्दों में, **''समझौता सिद्धान्त में चित्रित प्राकृतिक स्थिति के अन्तर्गत कानूनी दृष्टि से कोई समझौता नहीं किया जा सकता है।''**

(2) **समझौता वर्तमान में लागू नहीं** (Contract not Applicable in Modern Time)—कोई भी समझौता जिन निश्चित लोगों के मध्य होता है उन्हीं पर लागू होता है। कानूनी दृष्टि से किसी अज्ञात समय में अज्ञात व्यक्तियों द्वारा किया गया समझौता उसके बाद के समय और वर्तमान लोगों पर लागू नहीं किया जा

---

[1] "The social contract theory is highly dangerous since it make the state and its institutions as product of individual caprice." —Bluntshlli : *Theory of the State*, p. 295.

[2] "A leopard can not change his colour overnight."

सकता। **बेन्थम** के अनुसार, **''मेरे लिए आज्ञापालन आवश्यक है, इसलिए नहीं कि मेरे प्रपितामह ने तृतीय जार्ज के प्रपितामह से कोई समझौता किया था, वरन् इसलिए कि विद्रोह से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है।''**

सामाजिक समझौता सिद्धान्त का महत्व
(IMPORTANCE OF SOCIAL CONTRACT THEORY)

समाजिक समझौता सिद्धान्त का राजनीतिक विचारों के इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान है :

(1) सामाजिक समझौता सिद्धान्त ने राज्य की उत्पत्ति के दैवीय सिद्धान्त का खण्डन किया जिसमें राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था। समझौता सिद्धान्त ने इस तथ्य का प्रतिपादन किया कि राज्य दैवीय नहीं वरन् **मानवीय संस्था** है।

(2) सामाजिक समझौता सिद्धान्त ने इस सत्य का प्रतिपादन किया कि **जनसहमति** ही राज्य का आधार है, शक्ति अथवा शासक की व्यक्तिगत इच्छा नहीं।

(3) सामाजिक समझौता सिद्धान्त ने प्रभुत्व सम्बन्धी विचारधारा में महत्वपूर्ण योग दिया है। **हॉब्स** के विचारों के आधार पर **ऑस्टिन** ने **वैधानिक सम्प्रभुता** के विचार का प्रतिपादन किया। **लॉक** ने राजनीतिक प्रभुत्व के सिद्धान्त को प्रेरणा प्रदान की और **रूसो** के सामान्य इच्छा सम्बन्धी विचारों ने **लोकप्रिय सम्प्रभुता** की धारणा का प्रतिपादन किया।

ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त
(HISTORICAL OR EVOLUTIONARY THEORY)

यह सिद्धान्त बताता है कि राज्य न तो दैवीय कृति है, न वह शक्ति या युद्ध से उत्पन्न हुआ है और न ही वह व्यक्तियों के बीच परस्पर समझौते का परिणाम है। इस सिद्धान्त के अनुसार, राज्य कोई कृत्रिम संस्था नहीं वरन् एक स्वाभाविक समुदाय है। ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त ही राज्य की उत्पत्ति की सही व्याख्या प्रस्तुत करता है। राज्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रतिपादित दैवीय सिद्धान्त, शक्ति सिद्धान्त, पैतृक तथा मातृक सिद्धान्त तथा सामाजिक समझौता सिद्धान्त, इस मान्यता पर आधारित हैं कि राज्य की उत्पत्ति किन्हीं विशेष परिस्थितियों में अथवा किसी विशेष समय पर हुई है। इसी कारण ये सभी सिद्धान्त स्वीकार नहीं किये गये हैं। यह सिद्धान्त बताता है कि राज्य विकास का परिणाम है, निर्माण का नहीं। आदिकालीन समाज से क्रमिक विकास करते-करते इसने वर्तमान राष्ट्रीय राज्यों के स्वरूप को प्राप्त कर लिया है। इस सम्बन्ध में **डॉ. गार्नर** का कथन सत्य ही है कि **''राज्य न तो ईश्वर की कृति है न वह उच्चकोटि के शारीरिक बल का परिणाम है, न किसी प्रस्ताव या समझौते की कृति है और न परिवार का ही विस्तृत रूप है। यह तो क्रमिक विकास से उदित एक ऐतिहासिक संस्था है।''**[1] **बर्गेस** भी ऐसा ही विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि **''इस कथन का कि राज्य इतिहास की उपज है यही अर्थ है कि यह (राज्य) पूर्णत: अपूर्ण, प्रारम्भ से असभ्य किन्तु उन्नति की ओर अग्रसर अवस्थाओं से होकर मानव-जाति के पूर्ण एवं सार्वभौम संगठन की ओर मानव समाज का कृत्रिम तथा निरन्तर विकास है। विषय के मनोविज्ञान की तनिक गहराई में जाकर यदि देखा जाये तो इसका अर्थ कानूनी संस्थाओं के रूप में मानव प्रकृति के सार्वभौम सिद्धान्तों की क्रमिक प्राप्ति तथा प्रकृति के वैयक्तिक पहलू को सार्वभौम पहलू के अधीन करना है।''**[2]

जिस प्रकार भाषा प्राणियों की अर्थहीन बड़बड़ाहट से उत्पन्न हुई है, ठीक इसी प्रकार राज्य की उत्पत्ति बहुत प्राचीन और इतिहास से परे असभ्य समाज से हुई है।

---

[1] "The State is neither the handiwork of God, nor the result of superior physical force, nor the result of resolution or convention, nor a mere artificial mechanical creation, but an institution of nature growth of historical evolution."
—*Garner*

[2] "The proposition that the State is the product of hisotry means that it is the gradual and continuous development of human society, out of a grossly imperfect begining through crude but improving forms of manifestation, towards a perfect and universal organisation of mankind. It means, to go a little deeper into the psychology of the subject, that it is the gradual realisation, in legal institutions of the universal principles of human nature and the gradual subordination of the individual side of the nature to the universal side."
—Burgess : *Political Science and Constitutional Law*, Vol. I. 59.

राज्य कब और कैसे अस्तित्व में आया, यह कहना बहुत कठिन है। **समनर** तथा **कैलर** के अनुसार, **''यह कहना कि राज्य किस समय सबसे पहले दिखाई दिया, उसी प्रकार असम्भव है, जिस प्रकार यह कहना कि कब नैतिक नियम कानून बने या बच्चा कब युवा हुआ या युवक कब प्रौढ़ बना।''** राज्य के विकास का क्रम सभी स्थानों पर एक-सा नहीं रहा है। प्रकृति, परिस्थिति और स्वभाव के भेदों के कारण विभिन्न समयों, अवस्थाओं और स्थानों में राज्य के विकास का क्रम भी भिन्न-भिन्न रहा है।

राज्य के विकास में सहायक तत्व (Helping Factors in Development of State)

जिस प्रकार भाषा धीरे-धीरे विकसित हुई, मनुष्य में राजनीतिक चेतना धीरे-धीरे जाग्रत हुई, उसी प्रकार राज्य का विकास भी धीरे-धीरे हुआ है। राज्य के विकास में सहायक महत्वपूर्ण तत्व निम्नांकित हैं :

(1) मनुष्य की मूल सामाजिक प्रवृत्ति, (2) रक्त सम्बन्ध, (3) धर्म, (4) शक्ति, (5) आर्थिक गतिविधियाँ, (6) राजनीतिक चेतना।

(1) **मनुष्य की मूल सामाजिक प्रवृत्ति** (Natural Social Instincts of Man)—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहने की मूल प्रवृत्ति ने ही राज्य को जन्म दिया है। **अरस्तू** के शब्दों में, **''यदि कोई मनुष्य ऐसा हो जो समाज में न रह सकता हो अथवा जो यह कहता है कि मुझे केवल अपने ही साधनों की आवश्यकता है तो उसे मानव स्वभाव का सदस्य मत समझो। वह या तो जंगली जानवर है या देवता।''** सामाजिक प्रवृत्ति वाले मनुष्य जब साथ-साथ रहने लगें तो उनके स्वभाव तथा स्वार्थ अलग-अलग होने के कारण उनमें विवाद पैदा हो गये। इन विवादों का समाधान करने के लिए स्वत: ही राज्य का उदय हुआ। अत: राज्य मनुष्य की मूल सामाजिक प्रवृत्ति का परिणाम कहा जा सकता है। **जॉन मार्ले** का कथन है कि **''राज्य के विकास का वास्तविक आधार मनुष्य के जीवन में विद्यमान अन्तर्जात प्रवृत्ति रही है।''**

(2) **रक्त-सम्बन्ध** (Kinship)—राज्य के विकास में सहायक सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व रक्त सम्बन्ध ही है। रक्त-सम्बन्ध ने ही जातियों और कुलों को एकता के बन्धन में बाँधा और उन्हें संगठन का रूप दिया तथा दृढ़ता प्रदान की। सामाजिक संगठन रक्त-सम्बन्ध से ही उत्पन्न होता है। इस रक्त-सम्बन्ध की प्रारम्भिक इकाई परिवार था। आज्ञा पालन राजनीतिक संगठन और शासन प्रबन्ध परिवार में पाया जाता है। इस विषय में **सर हेनरीमेन** ने लिखा है कि **''समाज के प्राचीनतम इतिहास की आधुनिक गवेषणाएँ इस निष्कर्ष की ओर इंगित करती हैं कि समूह को एकता के सूत्र में बाँधने वाला प्रारम्भिक बन्धन रक्त-सम्बन्ध ही था।''**[1] आगे चलकर जनसंख्या की वृद्धि के कारण कुटुम्ब का आकार बढ़ा तथा जाति और कुल बने तब समाज का जन्म हुआ। **मैकाइवर** का कथन है कि **''रक्त-सम्बन्ध समाज को जन्म देता है, कालान्तर में समाज राज्य को।''**[2] प्रारम्भ में कदाचित् रक्त सम्बन्ध माता से जाने जाते थे और बहुपति प्रथा और अस्थायी वैवाहिक सम्बन्ध की प्रथा प्रचलित थी। बाद में शक्ति, प्रभुत्व और संगठन बढ़ जाने के कारण स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों की प्रधानता बढ़ने लगी। हिंसक पशुओं को पालने से, धन बढ़ जाने से सम्पत्ति के आधिपत्य से, कृषि आदि उद्योगों से तथा दास प्रथा आदि के कारण पैतृक प्रभुत्व बढ़ना प्रारम्भ हुआ। रक्त सम्बन्ध पिता से माना जाने लगा। इस प्रकार पहले कुटुम्ब, फिर कुल, फिर समाज तथा बाद में राज्य अस्तित्व में आया।

(3) **धर्म** (Religion)—धर्म ने भी राज्य की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। धर्म ने समाज को एकता के बन्धन में बाँधा है। प्रारम्भिक समाज में रक्त-सम्बन्ध तथा धर्म एक ही वस्तु के दो पहलू थे। **विल्सन** के अनुसार, **''धर्म समान रक्त का प्रतीक, उसकी एकता, पवित्रता तथा दायित्व की अभिव्यक्ति था।''** **गैटिल** का कथन है कि, **''रक्त-सम्बन्ध और धर्म एक ही वस्तु के दो रूप थे और समूह की एकता उनके कर्तव्यों को धार्मिक मान्यता प्राप्त थी।''**[3]

प्रारम्भिक समाज में धर्म के दो रूप प्रचलित थे—**पितृ पूजा** और **प्राकृतिक शक्तियों की पूजा**। व्यक्ति अपने परिवार के वृद्ध व्यक्तियों के मृत हो जाने पर उनकी आत्मा को प्रसन्न करने के लिए पितृ पूजा करते थे।

---

[1] "The most recent researches into the primitive history of society point to the conclusion that the earliest tie which knitted men togethe in communities was consanguinity on kinship."
—Maine : *The History of Institutions*, pp. 64-65.

[2] "Kinship creates society and society at length creates the State." —MacIver

[3] "Kinship and religion were, therefore, two aspects of the same thing, and the unity and obligation of the group were given religious sanction.
—Gettell : *Political Science*, p. 64

जो लोग एक ही वंश या रक्त से सम्बन्धित होते थे, उनके कुल देवता भी एक ही होते थे जो अधिकांशत: उनके पुरखे ही थे। इस प्रकार पितृ पूजा ने परिवारों को एकता के सूत्र में बाँधा।

धर्म का दूसरा रूप प्राकृतिक शक्तियों की पूजा थी। जंगली अवस्था में मनुष्य की बुद्धि का विकास नहीं हुआ था। वह प्राकृतिक परिवर्तनों को समझने में पूर्ण असमर्थ था। उसने बादल की गड़गड़ाहट, बिजली की कड़क, हवा की सनसनाहट में ईश्वरीय शक्ति अनुभव किया। वह प्राकृतिक शक्तियों—पृथ्वी, सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि की पूजा करने लगा। जो लोग एक ही शक्ति की उपासना करने लगे, उनमें आपस में मित्रता की भावना उत्पन्न हुई और यही भावना राज्य का आधार बनी।

प्रारम्भ में मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों को भूत-प्रेत या देवता समझता था। जो व्यक्ति यह सिद्ध कर देता था कि वह इन प्राकृतिक शक्तियों को नियन्त्रित रख सकता है, उसे समाज में असाधारण सम्मान प्राप्त हो जाता था। अनेक बार ये तान्त्रिक (जादूगर) राजा बन जाते थे। स्पार्टा में जादूगर राजा सांसारिक तथा धार्मिक क्षेत्रों का प्रधान बन गया था। इसी आधार पर **गिलक्राइस्ट** ने कहा है कि **''जादूगर से राजा बनने का चरण आसान है।''**[1]

धर्म संगठन और एकता के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व रहा है। धर्म ने मनुष्य को अनुशासन तथा आज्ञा पालन का पाठ पढ़ाया। इस प्रकार ने राज्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(4) **शक्ति** (Force)—राज्य के विकास में शक्ति या युद्ध का महत्वपूर्ण स्थान है। सामाजिक व्यवस्था को राजनीतिक व्यवस्था में बदलने का कार्य युद्ध द्वारा ही किया गया। युद्ध विजय और आज्ञापालन के फलस्वरूप कुटुम्ब जाति में, जाति कबीलों में तथा कबीले बड़े संगठनों में विस्तृत होते गये और राज्य का रूप धारण करते रहे। **जैक्स** का कथन है कि **''जन समाज का राजनीतिक समाज में परिवर्तन शान्तिपूर्ण उपायों से नहीं हुआ, यह परिवर्तन युद्ध द्वारा हुआ है।''**

कृषि तथा व्यवसाय की उन्नति के साथ जब लोग निश्चित स्थानों पर रहने लगे तो निजी सम्पत्ति की धारणा का उदय हुआ। स्थान तथा सम्पत्ति की रक्षा के लिए युद्ध होने लगे। लोग सुरक्षा प्रदान करने वाले शक्तिशाली व्यक्ति का नेतृत्व स्वीकार करने लगे। इस नेता की अधीनता में एक कबीला दूसरे कबीले पर आक्रमण करने लगा। इस युद्ध में विजयी कबीले का सरदार राजा बन गया। इस प्रकार युद्ध से राज्य की उत्पत्ति हुई। यह उक्ति भी प्रचलित है कि **''युद्ध से राजा का जन्म होता है।''**[2]

(5) **आर्थिक गतिविधियाँ** (Economic Activities)—राज्य की उत्पत्ति और विकास में मनुष्य की आर्थिक गतिविधियों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। **प्लेटो, मैकियावली, हॉब्स, लॉक, एडम स्मिथ और मॉण्टेस्क्यू** ने भी राज्य की उत्पत्ति तथा विकास में आर्थिक तत्वों के योगदान को स्वीकार किया है। **कार्ल मार्क्स** ने तो यहाँ तक कहा है कि **''राज्य आर्थिक परिस्थिति की ही अभिव्यक्ति है।'' गैटल** का कथन है कि, **''आर्थिक चेष्टाएँ, जिनके द्वारा मनुष्य ने मौलिक आवश्यकताओं की संतुष्टि की तथा बाद में धन का संचय किया राज्य के निर्माण में आवश्यक तत्व रही हैं।''**

आदि काल से लेकर अब तक मनुष्य **चार** आर्थिक अवस्थाओं से गुजरा है। उन आर्थिक अवस्थाओं के अनुरूप ही तत्कालीन राजनीतिक तथा सामाजिक संगठन रहे हैं। **प्रथम,** आर्थिक अवस्था **आखेट** अवस्था रही है। **आखेट अवस्था** में मनुष्य के जीवन-निर्वाह का साधन शिकार था। इसलिए मनुष्य का जीवन अस्थिर, असंगठित तथा भ्रमणशील था। **द्वितीय, पशुपालन** अवस्था रही हैं। पशुपालन अवस्था में मनुष्य पशु पालकर अपना जीवन निर्वाह करते थे। यद्यपि इस अवस्था में भी उनका जीवन भ्रमणशील था, किन्तु उनमें सामूहिकता तथा संगठन का अंश आ गया था। **तृतीय, कृषि अवस्था** रही है। कृषि अवस्था में मनुष्य के जीवन का आधार कृषि हो जाने पर, वे निश्चित स्थान पर स्थायी रूप से रहने लगे। निजी सम्पत्ति की धारणा उत्पन्न होने पर समाज में संघर्ष होने लगे। ऐसी स्थिति में कानून, न्यायालय और राजनीतिक सत्ता की स्थापना हुई। **चतुर्थ, आज की औद्योगिक अवस्था है** जिसमें आर्थिक जीवन के जटिल और विशाल ढाँचे ने राष्ट्रीय राज्यों को जन्म दिया है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक विकास के साथ-साथ मनुष्य के राजनीतिक संगठन में भी परिवर्तन हुए हैं। यह राज्य के विकास पर आर्थिक गतिविधियों के प्रभाव का स्पष्ट प्रमाण है।

---

[1] "From chief magician the step to Chief or King is simple. —*Gilchrist*

[2] "War begets the King."

(6) **राजनीतिक चेतना** (Political Consciousness)—राज्य के विकास में योगदान देने वाला एक महत्वपूर्ण तत्व राजनीतिक चेतना है। राजनीतिक चेतना का तात्पर्य उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए चेतना है, जिनके हेतु राज्य की स्थापना की जाती है। **गिलक्राइस्ट** के शब्दों में, **''राज्य निर्माण के सभी तत्वों की तह में, जिनमें रक्त-सम्बन्ध तथा धर्म भी सम्मिलित है, राजनीतिक चेतना है, और यह सबसे मुख्य तत्व है।''**[1] **वुडरो विल्सन** के इस कथन में कि **''संगठन की भावना स्वाभाविक** है और वह मनुष्य और परिवार के साथ उत्पन्न हुई है।'' यह तथ्य निहित है कि राजनीतिक चेतना ही मनुष्य को राज्य के रूप में संगठित करती है।

जब व्यक्तियों ने किसी निश्चित स्थान पर स्थायी रूप से रहना प्रारम्भ कर दिया तथा अपनी आजीविका के स्थायी साधन प्राप्त कर लिये तो उनकी यह स्वाभाविक इच्छा हुई कि कहीं दूसरे लोग उनके साधनों को हड़प न लें। फलत: नियमों की आवश्यकता अनुभव की गई। यही राजनीतिक चेतना का मूल था। प्रारम्भ में यह राजनीतिक चेतना अस्पष्ट तथा अव्यक्त आन्तरिक अनुभूति रूप में थी। जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ यह प्रकाशित तथा व्यक्त होने लगी। अब शासन, अनुशासन तथा युद्ध के लिए राजनीतिक संगठन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। साथ ही कुछ व्यक्तियों में शक्ति प्राप्त करने की इच्छा बढ़ी और वे सैनिक कार्यवाहियों द्वारा अधिक-से-अधिक शक्ति प्राप्त करने लगे। युद्ध में विजयी नेता राजा हो गये और उनका प्रभुत्व स्थापित हो गया। इस प्रकार की प्रक्रिया से सरकार और कानून का जन्म हुआ तथा राज्य मूर्त रूप में सामने आ गया।

वर्तमान समय में भी राजनीतिक चेतना के वशीभूत होकर मानव द्वारा **विश्व राज्य** की स्थापना की दिशा में सोचा जाने लगा है।

निष्कर्ष (Conclusion)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त ही राज्य की उत्पत्ति का सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त है। राज्य के विकास में उपर्युक्त तत्वों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। राज्य इन तत्वों द्वारा विकसित हुआ है। रक्त-सम्बन्ध पर आधारित परिवार राज्य का सबसे प्राचीन रूप है, धर्म ने इन परिवारों को एकता प्रदान की तथा आर्थिक गतिविधियों ने व्यक्तियों को संगठित होने के लिए प्रेरित किया। शक्ति तथा राजनीतिक चेतना ने राज्य के रूप को स्पष्ट किया। इस प्रकार राज्य का जन्म हुआ, उसने विकास करते-करते अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कर लिया। विकासवादी सिद्धान्त से हमें राज्य के विकास क्रम का वैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है।

राज्य का विकास

(EVOLUTION OF THE STATE)

परिचय—राज्य के विकास की कहानी एक लम्बी कहानी है। यह कहना कठिन है कि कब और किस स्थान पर राजनीतिक संगठन का अस्तित्व आरम्भ हुआ। अनेक राजनीतिक विचारकों ने भी राज्य के ऐतिहासिक क्रम का चित्रण किया है। वास्तव में, यह ऐतिहासिक दृष्टि से उचित नहीं उतरा ? भिन्न देशों में भिन्न राज्यों का विकास भिन्न-भिन्न ढंग से हुआ है। अत: राज्य के ऐतिहासिक विकास का वर्णन करते समय हमें किसी राज्य विशेष के विकास को दूर रखना होगा और राज्य के केवल सामान्य विकास को दृष्टि में रखते हुए इसे समझने का प्रयास करना होगा।

राज्य के विकास के विभिन्न चरणों का विवेचन निम्न रूप में किया जा सकता है—

(क) प्राचीन काल में राज्य (State in the Ancient Times)

(1) **जनजातीय राज्य** (The Tribal State)—आदिकाल में राज्य का अस्तित्व एक कबीले के रूप में था। आरम्भ में व्यक्ति भले ही परिवारों में रहते हों परन्तु राज्य के विकास में हम केवल उस सामाजिक चरण की विवेचना करते हैं जब वह किसी एक समूह, जाति अथवा कबीले में रहते थे। ये इकाइयाँ पितृसत्तात्मक थीं अथवा मातृसत्तात्मक, ये ऐसे प्रश्न हैं जो मानवशास्त्रियों के अनुसन्धान का विषय हो सकते हैं। हमारे अध्ययन के लिए इतना ही पर्याप्त है कि मनुष्य आदिकाल में परिवार का सदस्य था और ये परिवार स्वयं एक बड़े वंश अथवा जाति से सम्बन्धित थे और ऐसी जातियाँ एक कबीले रूपी संगठन की सदस्य थीं। प्रत्येक कबीले का एक मुखिया होता था जिसकी सत्ता तथा आदेश पूरे कबीले पर लागू होते थे। कुछ कबीलों में मुखिया का चुनाव होता था और कुछ में ऐसा पद किसी को वीरता के कारण दे दिया जाता था। कबीले के इस अधिकारी का मुख्य उद्देश्य

---

[1] "Underlying all other elements is State formation, including kinship and religion, is political conciousness, the supreme element." —*Gilchrist*